

शिक्षा की भारतीय दृष्टि

उषा शर्मा*

प्रत्येक संस्कृति की अपनी एक शिक्षा होती है और प्रत्येक शिक्षा की अपनी एक विशिष्ट संस्कृति होती है। इस रूप में संस्कृति और शिक्षा एक-दूसरे के साथ परस्पर अंतः संबंधित हैं और एक-दूसरे को निरंतर प्रभावित करते हैं। संस्कृति का स्वरूप अभौतिक है और वह परंपराओं, व्यवहार, आचरण या चिंतन में प्रतिबिंबित होती है। इस तरह से अवचेतन में गहरे पैठी संस्कृति मनुष्य की सोच और उस सोच से अनुप्राणित हमारे व्यवहार को संचालित करती है। शिक्षा की संस्कृति भी शिक्षा के स्वरूप को व्याख्यायित करती है और एक संदर्भ विशेष में व्याख्यायित करती है। यह व्याख्या भारतीय संदर्भों में है तो शिक्षा का स्वरूप भी भारतीयता से अनुप्राणित होना चाहिए, क्योंकि शिक्षा का उपयोग उसी भारतीय समाज में किया जाना है। यही शिक्षा की भारतीय दृष्टि है जो भारतीय बच्चे को ही केंद्र में रखते हुए स्वयं को संपादित करती है। प्रस्तुत लेख वस्तुतः इसी प्रश्न के उत्तरों का अन्वेषण करता है कि अंततः भारत की शिक्षा का स्वरूप कैसा हो।

प्रत्येक समाज की अपनी कतिपय आवश्यकताएँ होती हैं और ये आवश्यकताएँ समाज के द्वारा, समाज के सदस्यों के द्वारा ही पूर्ण की जाती हैं। प्रश्न है, क्या प्रत्येक समाज की आवश्यकताएँ समान होती हैं? क्या उन आवश्यकताओं के स्रोत समान होते हैं? क्या उन आवश्यकताओं को पूर्ण करने के साधन भी समान होते हैं? इस प्रश्न के प्रत्युत्तर में पुनः प्रश्न समक्ष आता है, क्या सभी समाज समान होते हैं? उत्तर है नहीं, कदापि नहीं। व्यक्ति भिन्न हैं तो उन व्यक्तियों से निर्मित समाज भी भिन्न होते हैं और उन समाजों की आवश्यकताएँ भी भिन्न होती हैं। 'भिन्नता के समाज' में 'एकत्व' की आकांक्षा वस्तुतः अति महत्वाकांक्षा है जो किसी भी दृष्टि से समीचीन नहीं है। भारत का समाज भी एक भिन्न प्रकार का समाज है जो भिन्न

आवश्यकताएँ रखता है और शिक्षा भी अपने भिन्न स्वरूप के माध्यम से उन आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन और माध्यम बनती है। यह भी सत्य है कि शिक्षा सदैव अपनी संस्कृति की जड़ों से जुड़ी रहती है और उसके प्रति अपनी निष्ठा प्रकट करती है और यह निष्ठा पुनः शिक्षा को ही सशक्त बनाती है। भारत की सामासिक संस्कृति में शिक्षा का स्वरूप क्या हो?

शिक्षा, संस्कृति और भारतीयता

शिक्षा का कोई एक सुनिश्चित अर्थ नहीं है। समय, देश, काल और वातावरण के अनुसार शिक्षा की अवधारणाओं में निरंतर परिवर्तन आता रहा है। तथापि शिक्षा के कतिपय शाश्वत सत्य या संवेदनाएँ होती हैं, जिनसे हर काल की शिक्षा संचालित होती है। इन समस्त संवेदनाओं में सर्वोपरि है मनुष्यता या

* प्रोफ़ेसर, प्रारंभिक शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नयी दिल्ली

मानवीय गुणों से ओत-प्रोत व्यक्तित्व। इस अर्थ में शिक्षा संस्कारवान बनाने का कार्य भी करती है जबकि शिक्षा स्वयं में एक संस्कार है।

शिक्षा के विभिन्न अर्थों का उल्लेख करने वाले *संस्कृत-हिंदी कोश* (वामन शिवराम आप्टे) में शिक्षा बृहद स्वरूपी और बहुआयामी है। शिक्षा का अर्थ है — अधिगम, अध्ययन, किसी कार्य को करने के योग्य होने की इच्छा, निष्णात होने की इच्छा, अध्यापन, शिक्षण, प्रशिक्षण, ज्ञानभिग्रहण, रण शिक्षा, युद्ध विज्ञान, छह वेदांगों में से एक जिसके द्वारा शब्दों का सही उच्चारण तथा संधि के नियम सिखाए जाते हैं, विनम्र, विनम्रता, शक्ति, कुशलता। प्रायः शिक्षा की चर्चा में अध्यापन, प्रशिक्षण स्वतः सम्मिलित हो जाते हैं लेकिन जिन बिन्दुओं पर चर्चा प्रायः नहीं होती, वे हैं रण शिक्षा और युद्ध विज्ञान।

आज के समय में शिक्षा के अर्थ के रूप में रण शिक्षा और युद्ध विज्ञान का होना थोड़ा नहीं ... बहुत अजीब-सा लगता है। रण शिक्षा और युद्ध विज्ञान, इन दोनों पदों को एक बार अलग-अलग देखने का प्रयास करते हैं। सर्वप्रथम युद्ध विज्ञान के बारे में चर्चा करते हैं। इस पद में उसकी संकल्पना स्वतः ही स्पष्ट है कि युद्ध करने की कला एक विज्ञान है। यदि विज्ञान है तो आजमाए हुए सिद्धांतों पर आधारित है। यह युद्ध ऐसा नहीं कि रणभूमि में जाकर योद्धा हाथ में कोई भी शस्त्र लेकर शत्रु से युद्ध करने लगेगा। अगर ऐसा होगा तो पराजय अवश्यंभावी है। महाभारत में अभिमन्यु चक्रव्यूह में चले तो गए थे लेकिन उससे बाहर आने का तरीका उन्हें मालूम नहीं था। इसी कारण वे वहीं शत्रुओं के बीच उनसे घिर गए। और उनका जो परिणाम हुआ वह हम सभी जानते ही हैं। अब हम यह समझ सकते हैं कि युद्ध करने की अलग-अलग

रणनीतियाँ होती हैं और यह सामने वाले शत्रु के बल, दम, सैन्य पराक्रम और योद्धाओं को देखकर निर्धारित की जाती थीं। हर तरह के शत्रु के साथ हर तरह का युद्ध नहीं किया जाता। अगर शत्रु बलशाली है और हम उसके मुकाबले कमतर हैं तो बुद्धिबल का प्रयोग करते हुए युद्ध को अपनी तरफ मोड़ लिया जाता है। इतना ही नहीं, शत्रु की चाल को भी समझना इस युद्ध विज्ञान का हिस्सा है। विज्ञान का मतलब होता है— विशिष्ट ज्ञान, व्यवस्थित ज्ञान, जो परीक्षाओं के, सत्यापन के कई चरणों को पार करते हुए अंतिम निष्कर्ष पर पहुँचता है। लेकिन किसी समय विशेष में जो अंतिम निष्कर्ष नज़र आता है, दरअसल वह अंतिम नहीं है। अंतिम कुछ भी नहीं है। सभी चीज़ें परिवर्तन के योग्य हैं। युद्ध स्वयं में एक भरा-पूरा विज्ञान है तो इस विज्ञान की ज़रूरत ही क्यों पड़ी? तो जवाब है कि युद्ध तो हर काल में हुए हैं और अतातायी हर युग में हुए हैं तो उनके संहार के लिए युद्ध में पारंगत होना ज़रूरी है। आज, अभी के समय को देखें तो लगता है कि देश के हर बच्चे को मिलिट्री शिक्षा दी जानी चाहिए। अगर यह मिलिट्री शिक्षा देश के हर बच्चे को दी जाती तो आज हमें लगता कि हमारे पास करोड़ों मजबूत बाजू हैं और इन बाजुओं पर भरोसा किया जा सकता है। युद्ध विज्ञान और रण शिक्षा में तरह-तरह के अस्त्र और शस्त्र का प्रयोग करने की कुशलता तो होगी ही साथ ही शत्रु को परखने, शत्रु का मनोबल गिराने और शत्रु को घेरने की तकनीक भी सिखायी जाती होगी। हाँ, एक बात और यहाँ समझते चलते हैं कि अस्त्र और शस्त्र में क्या अंतर है? वस्तुतः अस्त्र का मतलब होता है ऐसा हथियार जो फेंककर चलाया जाता है, जैसे— तीर, भाला और अभिमंत्रित हथियार। और शस्त्र ऐसा हथियार है जिसे हाथ में लेकर शत्रु

पर प्रहार किया जाता है। जैसे— गदा, तलवार आदि। प्राचीन ग्रन्थों में लगभग 36 प्रकार, उससे भी अधिक प्रकार, के अस्त्र-शास्त्रों का उल्लेख मिलता है और उन सबके प्रयोग के तरीके भी अलग-अलग हैं। आज देश में जिस तरह के हालात बने हुए हैं और आगे भी बनेंगे, उस स्थिति में मुझे शिक्षा के ये अर्थ ज्यादा महत्वपूर्ण और प्रासंगिक लगते हैं। लेकिन स्कूलों में एनसीसी के नाम पर थोड़ी-सी परेड करा दी, बस हो गया कोर्सी धूप-छाँव, सुख-दुख, अच्छा-बुरा सब साथ-साथ ही रहता है। आज की शिक्षा व्यवस्था को 'आज' के हालातों से सबक तो लेना ही चाहिए। कम से कम यह हुनर तो दे ही देती कि गलत और अन्याय के प्रति अपना विरोध प्रदर्शित कर सकें।

शिक्षा और कार्य करने की इच्छा

शिक्षा, शिक्षा दर्शन और भारत की शिक्षा, ये ऐसे चिंतन बिंदु हैं जिन्हें जितना ज्यादा कुरेदा जाए, ये उतने ही गहन अर्थ के साथ प्रस्तुत हो जाते हैं। इतना ही नहीं कार्य को करने के योग्य होने की इच्छा होना भी शिक्षा के दायरे में आता है। इसका यह अर्थ भी है कि शिक्षा प्राप्ति के लिए इच्छा होना भी जरूरी है। अगर इस इच्छा को जिज्ञासा से जोड़कर देखा जाये, तो बच्चे स्वभाव से ही नया जानने-परखने, 'प्रयोग' करने के लिए हमेशा लालायित रहते हैं। बच्चों में सीखने की यह स्वाभाविक प्रवृत्ति बच्चों के 'सीखने की प्रक्रिया' का भी मार्ग प्रशस्त करती है। इसलिए उनकी इस इच्छा का सम्मान किया जाना चाहिए और साथ ही उन्हें ऐसे अवसर देने चाहिए जिससे वे अपनी जानने-परखने की इच्छा को पूरा कर सकें। यह बात शिक्षकों के साथ माता-पिता को भी समझनी होगी। शिक्षा का एक अर्थ 'अध्ययन' भी है और इस

अध्ययन में 'स्वाध्याय' की 'अर्थ छाया' उपस्थित है। स्वाध्याय में 'स्वयं अध्ययन करना' और 'स्व' का अध्ययन करना भी शामिल है। दोनों ही अर्थों में यह अध्ययन पाठ्य-पुस्तक के अध्ययन और परीक्षा के लिए अध्ययन तक सीमित नहीं है। इस अर्थ में शिक्षा स्वाध्याय से जुड़े अन्य बिंदुओं को भी महत्व देती है, जैसे— श्रवण, मनन, निदिध्यासना यानी जो सुना, जो पढ़ा उसे समझना, उस पर चिंतन करना, उसका विश्लेषण करना, उसके पक्ष या विपक्ष में अपनी राय बनाना और उसे अपने जीवन में उतारना, उसका आचरण करना। इस अर्थ में शिक्षा में सुनना, गुनना, मंथन करना और फिर उसे कार्य में परिणत करना शामिल है। केवल सुनना ही पर्याप्त नहीं है, केवल चिंतन ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उसे कर्म में उतारना जरूरी है। कर्म का सिद्धांत शिक्षा का सिद्धांत है। जो शिक्षा, जो सीखना, जो अध्ययन करना, जो कुशलता कर्म में परिणत नहीं होता— वह शिक्षा है ही नहीं, 'छलावा' है। इस संदर्भ में यह ध्यान में रखी जाने वाली बात है कि हम शिक्षा के नाम पर अपने बच्चों को केवल 'जानकारी' न दें बल्कि उन्हें कर्म करने की प्रेरणा भी दें। कर्म भी कैसा? कर्म ऐसा जो हित-अहित का ध्यान रखे। हित-अहित का ध्यान रखने में विवेक की आवश्यकता होती है इसलिए यह कहा जा सकता है कि शिक्षा सदैव विवेकपरक होती है। संभवतः यह अतिशयोक्ति नहीं होगी कि विवेक शिक्षा का पर्याय है। इस विवेक का प्रयोग करते हुए बच्चे सही और गलत में भी अंतर कर सकें। सही का साथ दे सकें, सत्य के साथ खड़े हो सकें और गलत का विरोध कर सकें। शिक्षा स्कूल की चाहरदीवारी तक सीमित नहीं है, जीवन से जुड़ी हुई शिक्षा अंततः जीवन को जीने में काम आती है। शिक्षा की उपादेयता भी यही है कि

वह जीवन को सार्थक रूप में जीने की योग्यता प्रदान करे। शिक्षा का दर्शन भी जीवन के इसी तत्व को महत्व देता है जो कल्याणकारी और सार्थक है।

वस्तुतः दर्शन, विशेषतः भारतीय दर्शन स्वयं में एक व्यापक दृष्टि प्रदान करता है जिसके माध्यम से जीवन-जगत को उसके बृहत्तर रूप में देखा जा सके। दर्शन शब्द 'दृश' धातु से बना है जिसका अर्थ है अवलोकन करना और यह अवलोकन दो प्रकार का हो सकता है— बाह्य और आंतरिक। दोनों रूपों में दर्शन सत्य का अन्वेषण करता है और शिक्षा भी यही कार्य करती है सत्य का अन्वेषण। 'दृश्यते यथार्थतत्त्वमनेन' में यही भाव है, जिसके द्वारा यथार्थ तत्त्व का ज्ञान होता है, उसे दर्शन कहते हैं। लेकिन पाश्चात्य परंपरा दर्शन के लिए फिलॉसफी शब्द का प्रयोग करती है जिसका अर्थ है ज्ञान से प्रेमा। इस दृष्टि से यह स्पष्ट है भारत की दर्शनपरक दृष्टि दूरगामी लक्ष्य पर अवस्थित है। भारत की शिक्षा में भारतीय दर्शन की इसी व्यापक और अन्वेषणपरक दृष्टि को हृदस्थ किए हुए है। इस अर्थ में शिक्षा अन्वेषण से प्रस्फुटित अर्थ पर बल देती है। 'अर्थ' की व्यापक परिधि में समझ, तार्किक चिंतन, आलोचनात्मक चिंतन, विश्लेषण, संश्लेषण, सृजनात्मक चिंतन और गहन बोध समाहित है। अर्थ के अभाव में शिक्षा निरर्थक और यांत्रिक हो जाएगी। सत्य के अन्वेषण में अर्थ स्वयमेव सम्मिलित है। शिक्षा के अर्थ का यही निहितार्थ है कि बच्चों में सोचने, समझने, चिंतन करने, वाद-विवाद करने, असहमति प्रदर्शित करने और सवाल पूछने, सवाल उठाने, सवाल खड़े करने की कुशलता, हुनर, योग्यता आदि विकास करे, जिससे बच्चों की आवाज़ खामोश न होने पाए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भी आलोचनात्मक

चिंतन के माध्यम से 'खामोशी की संस्कृति' को 'तोड़ने' पर बल देती है। 'खामोशी' यँ भी 'श्मशान' का हिस्सा होती है, जीवन का नहीं।

शिक्षा और विनम्रता

शिक्षा और विनम्रता के बीच बेहद प्रगाढ़ संबंध हैं, क्योंकि विनम्रता का संबंध हमारे आचार, विचार और व्यवहार से है और शिक्षा भी समाज में व्यवहार कुशलता का गुण विकसित करती है। यह भी सत्य है कि भाव की विनम्रता विरलों को ही प्राप्त होती है। भाव की अभिव्यक्ति तो विनम्र हो सकती है लेकिन स्वयं का भाव का विनम्र होना दुर्लभ है, क्योंकि भाव की विनम्रता स्वयं में एक तपस्या है और तपस्या में 'तप' भी है और 'ताप' भी हम जानते हैं कि जब मनुष्य के भीतर कर्त्ता का भाव तिरोहित होता है तो विनम्रता का उदय होता है। यह 'आरोह-अवरोह' की संगति बहुत उम्दा भी है और उदाहरण भी। शिक्षा और विनम्रता के बीच के संबंध की बानगी हमें वामन शिवराम आप्टे के *संस्कृत-हिंदी कोश* में देखने को मिलती है। वे शिक्षा के अर्थ में विनम्र, विनम्रता का उल्लेख करते हैं और विनम्रता शब्द के अर्थ में विनम्र, विनय, शिष्ट, मृदुभाषी, अवनत, सुशील, आर्य, श्रेष्ठ, झुका हुआ, जितेंद्रिय—जिसने अपनी इंद्रियों को वश में कर लिया है आदि शब्दों को अपने समक्ष पाते हैं। इतना ही नहीं, शब्दकोश में 'विनयम्' शब्द के अर्थ के रूप में 'शिक्षा' को भी देख सकते हैं। हितोपदेश के श्लोक में कहा गया है— 'विद्यां ददाति विनयं, विनयाद् याति पात्रताम्। पात्रत्वात् धनमाप्नोति, धनात् धर्मं ततः सुखम्॥ अर्थात् विद्या मनुष्य को विनम्र बनाती है, विनय से मनुष्य योग्यता को प्राप्त होता है, योग्यता से धन को प्राप्त करता है, धन से धर्म प्राप्त

होता है उस धर्म से सुख प्राप्त होता है। मनुष्य की यही विनयशीलता उसे योग्य बनाती है। जब हम 'पात्रता' की बात करते हैं तो हम योग्यता के साथ-साथ सुदृढ़ चरित्र की ओर भी संकेत करते हैं और जब हम 'धर्म' की बात करते हैं तो 'कर्तव्य, सदाचरण' की ओर भी संकेत करते हैं। यहाँ 'धर्म' को उचित कर्म, कर्तव्य के अर्थ में ही समझा जाना चाहिए।

इस रूप में शिक्षा हमें विनम्र रहना सिखाती है और विनम्रता का गुण विकसित करती है यानी शिक्षा वह शिष्टाचार सिखाती है जिससे कोई व्यक्ति या बच्चा समाज में सभ्य तरीके से रह सके। इसे 'समाजीकरण' के अर्थ में भी लिया जा सकता है। लेकिन यहाँ यह समझना भी बेहद ज़रूरी है कि यह विनम्रता न तो 'कमज़ोरी' है, न ही 'कायरता' और न ही 'पलायन'। वस्तुतः शिक्षा तार्किक मनुष्य, विचारशील प्राणी और अदम्य साहसी मानव बनने में मदद करती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भी अपने आधार सिद्धांतों के अंतर्गत यही कहती है कि 'शैक्षिक प्रणाली का उद्देश्य अच्छे इंसानों का विकास करना है, जो तर्कसंगत विचार और कार्य करने में सक्षम हों, जिसमें करुणा और सहानुभूति, साहस और लचीलापन, वैज्ञानिक चिंतन और रचनात्मक कल्पनाशक्ति, नैतिक मूल्य और आधार हों। इसका उद्देश्य ऐसे उत्पादक लोगों को तैयार करना है जो कि संविधान द्वारा परिकल्पित समावेशी और बहुलतावादी समाज के निर्माण में बेहतर तरीके से योगदान करें।' इन पंक्तियों को गौर से पढ़ने और पंक्तियों के बीच पढ़ने के उपरांत यह समझ आता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति एक ओर करुणा, संवेदना पर बल देती है तो दूसरी ओर तर्कसंगत विचार और कार्य के सिद्धांत को पोषित करती है। जहाँ तर्कसंगत विचार और कार्य, मानव को मज़बूत,

सशक्त और साहसी बनाते हैं वहीं करुणा, सहानुभूति विनम्र बनाते हैं। दरअसल, साहस और विनम्रता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं अर्थात् साहसी होने के साथ विनम्र होना और विनम्र होने के साथ साहसी होना। लेकिन ये साहस और विनम्रता किसलिए? क्यों और किसके लिए? साहस ऐसा जो गलत को गलत कहने में संकोच का अनुभव न करे और विनम्रता इसलिए जिससे हमारे भीतर 'दंभ, अहं' का भाव न आए। हाँ, स्वाभिमान होना बेहद ज़रूरी है। लेकिन यह साहस और विनम्रता तभी आती है जब ज्ञान आता है और इस ज्ञान के साथ तर्क पर पकड़ मज़बूत होती है। इसका अर्थ है कि 'ज्ञान की ताकत' सर्वोपरि है, क्योंकि इससे आत्मविश्वास आता है और जब स्वयं पर विश्वास हो तो विनम्रता भी दबे पाँव चली ही आती है।

शिक्षा मनुष्य को यह सीखने में मदद करती है कि हमेशा गलत के विरोध में खड़े रहो, चाहे अकेले ही क्यों न खड़े होना पड़े। अपनी बात कहो, लेकिन सधे हुए अंदाज़ में, सधी हुई भाषा में और कहते समय विनम्रता होनी चाहिए। गलत को गलत कहने के कई अंदाज़ हो सकते हैं। आप चीखकर भी उस बात को कह सकते हैं और शांत भाव से भी। जब सामने वाला गलत होगा तो वह आपके चीखने-चिल्लाने के प्रत्युत्तर में और तेज़ी से चिल्लाएगा और इस चिल्लम-चिल्ली में कोई रचनात्मक बात हो ही नहीं पाएगी और न ही कोई परिणाम निकलेगा। यह सत्य है कि समय, परिस्थिति के अनुसार विनम्रता का साथ छोड़ थोड़ा उग्र होना पड़ता है, लेकिन इसमें भी सलीका है। आवाज़ में तलखी न होकर वज़न होता है, स्वर तटस्थ और ओजपूर्ण होता है। वस्तुतः शिष्ट रहते हुए अपनी आपत्ति दर्ज करने का हुनर शिक्षा ही विकसित करती

है। अब सवाल उठता है कि शिक्षा के संदर्भ में विनम्र, विनम्रता का क्या औचित्य है? दरअसल गहराई से देखें तो ज्ञात होता कि यह विनम्रता एक तरह का संस्कार है जो प्रत्येक व्यक्ति में होना चाहिए और विनम्रता में अहं का त्याग भी है।

शिक्षा हमारे भीतर अनेक गुणों का विकास तो करती है ही, साथ ही हमें सुसंस्कृत भी बनाती है। शिक्षा स्वयं में संस्कार तो है ही, साथ ही वह संस्कारवान होने का माध्यम भी है। इस अर्थ में शिक्षित व्यक्ति संस्कारवान, सुसंस्कृत होता है जिसे हम अंग्रेजी में कल्चर्ड कहते हैं जो कल्चर यानी संस्कृति अथवा सुसंस्कृत होने से जुड़ा हुआ है, लेकिन इसी देश का एक वर्ग या आबादी ऐसी भी है जिसे संस्कृति शब्द से बहुत ही ज्यादा परहेज है। इस लिहाज से शिक्षा और आध्यात्मिकता में कोई अंतर नहीं रह जाता। लेकिन इसी देश का एक वर्ग या आबादी ऐसी भी है जिसे अध्यात्म शब्द से बहुत ही ज्यादा परहेज है। शिक्षा जब विनम्रता सिखाती है तो स्थिति-परिस्थिति के साथ ही विनम्रता सिखाती है यानी अपना स्वाभिमान बनाए रखते हुए अपनी बात को विनम्रता के साथ प्रस्तुत करने का हुनर। विनम्रता का संदर्भ अनेक प्रकार के आयामों को उद्घाटित करता है। एक पक्ष तो है। विचार और दूसरा भाषा। तीसरा भावना या मंतव्य। यह हो सकता है कि

हमारी भाषा में तलखी हो लेकिन अंदाज इतना सुकून वाला हो कि उसकी तलखी नज़र अंदाज हो जाती है या फिर तलखी चुभती नहीं है। कभी ऐसा भी होता है कि हमारी भाषा में तलखी नहीं है लेकिन हमारा अंदाज इतना लाउड हो जाता है कि 'सीधी' बात भी उलटी नज़र आने लगती है और बिना वजह मनमुटाव पैदा हो जाता है। अब मंतव्य साफ़ हो तो सधे हुए अंदाज में अपना पक्ष रखने का हुनर भी तो चाहिए। इस विनम्रता के संदर्भ में यह समझना ज़रूरी है कि इसमें वह ताकत होती है जिससे हर बेईमान व्यक्ति मन ही मन डरता है और खौफ़ खाता है। भय इस बात का भी कि अपनी विनम्रता से कहीं 'वह विनम्र' व्यक्ति कु-व्यवस्था पर आघात न करे।

इस प्रकार शिक्षा की भारतीय दृष्टि भारतीय समाज, राजनीति और भौगोलिक एवं समसामयिक आवश्यकताओं से संचालित है। शिक्षा और विनम्रता का संबंध अत्यंत विलक्षण है जो कहीं भी दुर्बल होने को नहीं दर्शाता, बल्कि विनम्रता एक शक्ति के रूप में प्रकट होती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भी ऐसे ही न्यायसंगत समाज और विवेकशील, बेहतर इंसान के निर्माण की अनुशंसा करती है जिसका माध्यम है— शिक्षा।

संदर्भ

आप्टे, वामन शिवराम. 1969. *संस्कृत-हिंदी कोश*, मोतीलाल बनारसी दास, पटना.
राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार.